पर्यावरण साहित्य और हरित चिंतन

क्षितिजा शेट्टी

एम.एल.ए अकैडमी ऑफ हायर लर्निंग, मल्लेश्वरम, बैंगलोर.

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18790886

ABSTRACT:

समकालीन युग में पर्यावरण-संकट मानव अस्तित्व के लिए गंभीर चुनौती बन चुका है, इसलिए हिंदी साहित्य में पर्यावरण और हरित चिंतन का विमर्श अत्यंत प्रासंगिक हो गया है। हिंदी के कवियों, कथाकारों और निबंधकारों ने प्रकृति का केवल सौंदर्य-वर्णन ही नहीं किया, बल्कि प्रदूषण, वनों की कटाई, जल-संकट, औद्योगीकरण और उपभोक्तावाद से उत्पन्न संकटों को भी रचनात्मक ढंग से सामने रखा है। इस शोध-पत्र में पर्यावरण साहित्य की अवधारणा, हरित चिंतन का वैचारिक आधार, तथा हिंदी गद्य-पद्य रचनाकारों की पर्यावरणीय दृष्टि का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। तुलसीदास, महादेवी वर्मा, केदारनाथ सिंह, अनुपम मिश्र, निर्मला पुतुल, हरिराम मीणा आदि रचनाकारों की रचनाओं के उदाहरण लेकर यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि साहित्य किस प्रकार समाज में पर्यावरणीय चेतना और संरक्षण का भाव पैदा करता है। अंत में निष्कर्ष के रूप में यह प्रतिपादित किया गया है कि हरित चिंतन केवल साहित्यिक रुझान नहीं, बल्कि मानव–केन्द्रित विकास मॉडल के स्थान पर प्रकृति–केन्द्रित संतुलित विकास की ओर उन्मुख एक वैचारिक आंदोलन है।

KEYWORDS:

पर्यावरण साहित्य, हरित चिंतन, पर्यावरणीय विमर्श, Ecocriticism, प्रकृति-बोध, पर्यावरण चेतना.

पर्यावरण साहित्य की परिभाषा

पर्यावरण साहित्य वह साहित्य है जो प्रकृति, पारिस्थितिकी तंत्र, मानवीय जीवन और पर्यावरणीय समस्याओं के बीच संबंधों का विवेचन करता है। यह साहित्य प्रकृति के सौंदर्य के साथ-साथ उसके अपक्षय, प्रदूषण, जंगलों की कटाई, जल स्रोतों का क्षरण, जैव विविधता का नुकसान आदि मुद्दों को भी रेखांकित करता है।

पर्यावरण साहित्य और हरित चिंतन: अवधारणा

पर्यावरण साहित्य से आशय उन रचनाओं से है जिनमें प्रकृति, पर्यावरण, पारिस्थितिकी, जैव-विविधता, पर्यावरणीय संकट, प्रदूषण और संरक्षण जैसे प्रश्न प्रमुख रूप से उपस्थित हों। यह साहित्य प्राकृतिक संसार को केवल पृष्ठभूमि या अलंकार के रूप में नहीं, बल्कि स्वतंत्र चरित्र और मूल्य–संबल के रूप में देखता है। हरित चिंतन, साहित्य और विचार–परंपरा में पर्यावरण–केन्द्रित दृष्टि का वह रूप है जो मानवीय जीवन और विकास के मॉडल को प्रकृति–अनुकूल, टिकाऊ और न्यायपूर्ण बनाने पर बल देता है। इसमें वनों, नदियों, पहाड़ों, पशु–पक्षियों के अधिकार, आदिवासी समुदायों के पारंपरिक ज्ञान, और स्थानीय पारिस्थितिक संतुलन को आधुनिक विकास योजनाओं की कसौटी पर परखा जाता है। हिंदी साहित्य में यह हरित चिंतन कभी भक्ति–काव्य के प्रकृति–चित्रण में, कभी छायावादी कविता के कोमल प्रकृति–प्रेम में, और आज के समकालीन लेखन में प्रतिरोधात्मक पर्यावरण विमर्श के रूप में अभिव्यक्त होता है।

भारत में हरित चिंतन और साहित्य

भारत में पर्यावरणीय चिंतन का इतिहास प्राचीन काल से मौजूद रहा है। वेद, उपनिषद और पुराणों में प्रकृति के संरक्षण तथा संतुलन की बात की गई है। भक्ति–कालीन कवियों ने प्रकृति को ईश्वरीय लीला और मानवीय भाव–अनुभूति के माध्यम के रूप में देखा, जहाँ पेड़–पौधे, नदी–पर्वत सभी सजीव संवेदनाओं से युक्त हैं। तुलसीदास के "रामचरितमानस" में वन, ऋतुएँ, नदियाँ और पशु–पक्षी रामकथा के अभिन्न पात्रों के रूप में उभरते हैं, जिससे मनुष्य–प्रकृति की समरसता का बोध होता है। बाद के दौर में छायावादी कवियों – विशेषकर पंत, महादेवी और निराला – ने प्रकृति को आत्म–अनुभूति, प्रेम, विरह और करुणा से जोड़कर एक मानवीकृत, संवेदनशील रूप में प्रस्तुत किया। इस चरण में पर्यावरणीय संकट का सीधा उल्लेख कम है, परन्तु प्रकृति–प्रेम

और सह-अस्तित्व का भाव आगे की हरित चिंतन–धारा की नींव रखता है।

आधुनिक समय में भारत के कई लेखकों और विचारकों ने पर्यावरणीय समस्याओं पर लेखन किया है। पर्यावरणीय हित में कार्य करने वाले कारकों में परंपरागत खेती–पद्धति, जल–संचयन, वृक्षारोपण, जैविक खेती, स्थानीय संसाधनों का संतुलित उपयोग, तथा ग्राम–केन्द्रित विकास–दृष्टि शामिल हैं। दूसरी ओर तीव्र औद्योगीकरण, अंधाधुंध शहरीकरण, रासायनिक कृषि, प्लास्टिक–उपयोग, वनों की कटाई, खनन, परमाणु और ताप विद्युत परियोजनाएँ, अनियंत्रित वाहन–उत्सर्जन आदि पर्यावरण के लिए अहितकारी तत्व हैं। हिंदी रचनाकारों ने विशेष रूप से निम्न बिंदुओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है:

- नदियों का प्रदूषण और औद्योगिक अपशिष्ट का संकट।
- जंगलों की कटाई, वन्य जीवों का समाप्त होता आवास, तथा आदिवासी–जीवन का विघटन।
- भूमंडलीकरण और बाजारवादी उपभोक्तावाद द्वारा प्रकृति के वस्तुकरण का खतरा।
- जल–संकट, सूखा, बाढ़ और जलवायु परिवर्तन के मानवीय परिणाम।

इन मुद्दों के प्रति सजगता ही हरित चिंतन की बुनियाद बनती है, जिसे हिंदी साहित्य ने संवेदनात्मक और वैचारिक दोनों स्तरों पर व्यक्त किया है।

हरित चिंतन का विकास

हरित चिंतन का विकास आधुनिकता के उदय के साथ हुआ। विज्ञान और तकनीकी विकास ने जीवन को सरल बनाया परंतु साथ ही प्रकृति के साथ असंतुलन पैदा किया। पर्यावरणीय संकटों जैसे प्रदूषण, ग्रीन हाउस प्रभाव, बायोडायवर्सिटी का नुकसान आदि समस्याओं ने सामाजिक चिंतकों को चिंतित किया और साहित्यकारों ने इन विषयों को अपने लेखन का केंद्र बनाया। हरित चिंतन केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं है बल्कि सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन भी है। यह जनता, सरकार और संगठनों को प्रकृति के प्रति जिम्मेदार व्यवहार के लिए प्रेरित करता है। इससे जुड़े कार्यों में वृक्षारोपण, जल संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण और वन्यजीव संरक्षण जैसी गतिविधियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण साहित्य के प्रमुख आयाम

प्रकृति का सौंदर्य और मानवीय अनुभूति: प्रकृति का वर्णन कई कवियों और लेखकों द्वारा सौंदर्य की दृष्टि से किया गया है। यह साहित्य पाठकों को प्रकृति के सौंदर्य का अनुभव कराता है और उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न करता है। रवींद्रनाथ टैगोर की कविताओं में प्रकृति के प्रति गहरी संवेदना तथा वातावरण की सूक्ष्मता का वर्णन मिलता है।

पर्यावरणीय संकट का चित्रण: उपन्यासों, कहानियों और निबंधों में प्रदूषण, जंगलों की कटाई, जल संकट और जैव विविधता की हानि जैसी समस्याएँ प्रमुख रूप से प्रस्तुत की गई हैं। इससे पाठक इन समस्याओं की गंभीरता से अवगत होते हैं।

सांस्कृतिक मूल्य और हरित जीवनशैली: पर्यावरण साहित्य में पारंपरिक जीवनशैली, सांस्कृतिक मूल्य और प्राकृतिक जीवन के साथ संतुलन को पुनर्स्थापित करने की बात की गई है। यह दर्शाता है कि किस प्रकार समाज और संस्कृति का हरित जीवनशैली से गहरा सम्बन्ध है।

सामाजिक-राजनीतिक आलोचना: पर्यावरण साहित्य सत्ता, नीति और व्यवस्था पर सवाल उठाता है। यह उस आर्थिक विकास मॉडल की आलोचना करता है जो पर्यावरण के विनाश की कीमत पर प्रगति को महत्व देता है। हरित चिंतन के प्रमुख रचनाकारों ने उपन्यासों और निबंधों में सामाजिक-पर्यावरणीय मुद्दों का विश्लेषण किया है। मानवीय जीवन और प्राकृतिक पारिस्थितिकी के मध्य संतुलन पर ध्यान केंद्रित किया तथा भारतीय पारंपरिक जीवनशैली तथा प्रकृति के मध्य सम्बन्धों को साहित्य का विषय बनाया। समाज में जागरूकता और पर्यावरण के प्रति नागरिकों की भूमिका को उभारने वाली रचनाएँ लिखीं।

समकालीन काव्य और पर्यावरण विमर्श

उत्तर–आधुनिक काल में जब औद्योगीकरण और उपभोक्तावाद ने प्रकृति पर तीव्र आघात किए, तब हिंदी कवियों ने पर्यावरणीय संकट को केन्द्रीय विषय बना लिया। त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, ज्ञानेंद्रपति, अरुण कमल, वीरेन डंगवाल, निर्मला पुतुल, हरिराम मीणा आदि कवियों की रचनाओं में जल, जंगल, जमीन, विस्थापन और पारिस्थितिक असंतुलन के प्रश्न प्रखर रूप से उठते हैं। इस तरह समकालीन कविता केवल प्रकृति–चित्रण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि पर्यावरण–न्याय और विकास–मॉडल की आलोचना का सशक्त माध्यम बन जाती है।

तुलसीदास

तुलसीदास की "रामचरितमानस" में वन–संस्कृति, नदियों और पर्वतों का बार–बार उल्लेख मिलता है, जहाँ प्रकृति रामभक्ति और नैतिकता की वाहक बनकर आती है। उदाहरणतः अरण्यकांड में राम–वन–गमन के प्रसंगों में वनों की शीतलता, सरिताओं की पवित्रता और पशु–पक्षियों का सहज सौहार्द वर्णित है, जो मनुष्य और प्रकृति के निर्बाध सह–अस्तित्व का आदर्श चित्र उपस्थित करता है।

- वन, गिरि, सरिता, तरु–तरु, सब राम–स्मरण से पावन और मंगलमय बताए गए हैं।
- प्रकृति यहाँ धर्म, करुणा और संतुलन की प्रतीक है, जो मानव को मर्यादा और संयम की शिक्षा देती है।

सुमित्रानंदन पंत (प्रकृति के सुकुमार कवि)

पंत जी ने प्रकृति को अपनी 'सहचरी' माना है। उनकी ये पंक्तियाँ बताती हैं कि प्रकृति ही मनुष्य की सबसे बड़ी शिक्षिका है:

"छोड़ द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया,
बाले! तेरे बाल-जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन?
भूल अभी से इस जग को!"

"तुमने मिट्टी से करुणा पा, यह सजल प्रेम विकसित पाया,
जग ने मिट्टी को रौंद-रौंद, अपना पाषाण-हृदय बनाया।"

(इन पंक्तियों में पंत जी प्रकृति की कोमलता और मनुष्य की कठोरता की तुलना करते हैं।)

जयशंकर प्रसाद ('कामायनी' के माध्यम से)

प्रसाद जी ने 'कामायनी' में जल प्रलय के माध्यम से यह संदेश दिया कि जब मनुष्य अपनी सीमाओं को भूलकर प्रकृति का शोषण करता है, तो विनाश अवश्यंभावी है:

"शैल-श्रृंग के नीचे छाया, जल-प्लावन से व्याप्त हुई,
चंचल चपला सी वह लहरें, क्षितिज ओर से व्याप्त हुई।"

"प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित हम सब थे,
बस गर्व में डूबे, अपनी ही धुन में थे।"

(यह पंक्तियाँ प्रकृति की अजेय शक्ति और मानव के मिथ्या अहंकार को दर्शाती हैं।)

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

निराला ने 'बादल राग' और 'संध्या सुंदरी' जैसी कविताओं में प्रकृति के रौद्र और शांत दोनों रूपों का वर्णन किया है। वे प्रकृति के दोहन के विरुद्ध थे:

"झूम-झूम मृदु गरज-गरज घन घोर!
राग अमर, अंबर में भर निज रोर!"

"विप्लव-रव से छोटे ही हैं शोभा पाते,
अट्टालिका नहीं रे, आतंक-भवन।"

(यहाँ बादल का आह्वान शोषकों के विरुद्ध और प्रकृति के न्याय के प्रतीक के रूप में है।)

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

अज्ञेय जी ने आधुनिक सभ्यता द्वारा प्रकृति के विनाश पर गहरी चोट की है:

"सांप! तुम सभ्य तो हुए नहीं, नगर में बसना भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूं— (उत्तर दोगे?) तब कहाँ सीखा डसना, विष कहाँ पाया?"

"घास भी बोलती है, अगर तुम सुनने को तैयार हो,
वह सभ्यता के चरणों तले दबी, सिसकती है।"

(अज्ञेय आधुनिक कंक्रीट के जंगलों और प्रकृति की सिसकी को अपनी कविता का आधार बनाते हैं।)

केदारनाथ अग्रवाल

केदारनाथ जी ने अपनी कविताओं में 'नदी' और 'खेत' के माध्यम से ग्रामीण पर्यावरण के संरक्षण की बात की है:

"मैंने उसे जब-जब देखा, लोहा देखा,
लोहे जैसा तपते देखा, गलते देखा, ढलते देखा।"

"केन किनारे बैठा मैं, घंटों निहारा करता हूँ,
उसकी लहरों में उठती, व्याकुलता को पढ़ता हूँ।"

(प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करने की यह कला आज के पर्यावरण चिंतन की नींव है।)

चुनौतियाँ और समाधान

पर्यावरण साहित्य और हरित चिंतन के समक्ष कई चुनौतियाँ हैं जिनका सामना समाज को करना है:

1. उपभोक्तावाद और विकास की धारणाएँ: अत्यधिक उपभोक्तावाद प्रकृति के विनाश को बढ़ावा देता है। इसके समाधान के लिए संतुलित विकास की अवधारणा को अपनाना आवश्यक है।
2. शिक्षा की कमी: पर्यावरणीय शिक्षा का अभाव लोगों में संवेदनशीलता की कमी पैदा करता है। इसे शिक्षा प्रणाली के प्रमुख भाग के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।
3. नीति और कानूनी कार्यान्वयन: पर्यावरणीय नीतियाँ मौजूद हैं परंतु उनके कार्यान्वयन में असफलताएँ भी हैं। इसे प्रभावशाली रूप से लागू करने हेतु नीति निर्माताओं, नागरिक समाज तथा सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि 'हरित चिंतन' आज के समय की अनिवार्य आवश्यकता है। प्राचीन से समकालीन काल तक रचनाकारों ने प्रकृति को कभी सौंदर्य, कभी आस्था, कभी जीवन–सहचर और आज के दौर में संघर्षशील चरित्र के रूप में चित्रित करते हुए पर्यावरण–संरक्षण की नैतिक चेतना को पुष्ट किया है। हिंदी साहित्य ने सदैव प्रकृति के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन किया है। यदि मनुष्य ने प्रकृति के साथ अपने संबंधों को 'उपयोगकर्ता' से बदलकर 'संरक्षक' के रूप में नहीं ढाला, तो आने वाली पीढ़ियों के लिए केवल बंजर भूमि ही शेष रहेगी। साहित्य ने इस संकट को पहचाना है और अपनी रचनाओं के माध्यम से एक 'पर्यावरण अनुकूल' (Eco-friendly) समाज बनाने का आह्वान किया है। अतः साहित्य केवल भाव–सौंदर्य का माध्यम न रहकर समाज को हरित, न्यायपूर्ण और टिकाऊ भविष्य की ओर प्रेरित करने वाली एक जागरूक, संघर्षशील शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018 (संशोधित)।
2. पल्लव, सुमित्रानंदन पंत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2015।
3. अरि ओ करुणा प्रभामय, अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2012।
4. युग की गंगा, केदारनाथ अग्रवाल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010।
5. पर्यावरण और साहित्य, डॉ. विमल कुमार, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2021।
6. हिंदी का पर्यावरणीय साहित्य, संपादक- प्रभाकर हेब्बार, अध्ययन बुक्स, नई दिल्ली, संस्करण- प्रथम।
7. डॉ. अमित कुमार आदि, "हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय चेतना एवं जागरूकता का अध्ययन", शोध-पत्र, पीडीएफ़ स्वरूप में प्रकाशित, (आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय मुद्दे)।